" प्रथम अध्याय "

" हिन्दी नाटकों की, विशेषकर ऐतिहासिक नाटकों की विकासात्मक रेखा "

प्रस्तावना :

आज प्रचलित सभी साहित्यिक विधाओं मे नाटक सबसे अधिक विकसित एवं सशक्त साहित्य विधा है। मनुष्य के जीवन का यथार्थ चित्र नाटकमें प्रस्तुत होता है। इसीलिए कहा गया है - " सृष्ठा नाटककार है, वही निर्देशक भी है, धरती का प्रशस्त वक्ष मुक्ता काशी रंगमंच है, प्रतिक्षण घटित होनेवाला घटनात्मक नाटय व्यापार है, जीवधारी पात्र है, सरिता, सागर, वन, पर्वत, खेत, खलिहान तथा नगर-ग्राम दृश्य सज्जाएँ है - इस प्रकार जीवन स्वंय अविराम रूपसे अभिनीयमान एक विराट नाटक है।"[१]

हिन्दी नाटक : काल विभाजन :

मानव जीवन स्वंय एक नाटक है, इस का प्रतिबिंब हिन्दी नाटक में मिलता है। हिन्दी नाट्य साहित्य के विकास के बारे में विद्वानो मे. मतभेद है। कोई विद्वान हिन्दी नाटक का निर्माण काल रासो काव्य ग्रंथों से मानता है, तो कोई आधुनिक युग को। इसीलिए हिन्दी नाटकों की विकासात्मक रूपरेखा देखते समय हिन्दी नाटक का काल विभाजन जो भिन्न भिन्न विद्वानों ने किया है, उसे देखना युक्तिसंगत होगा। उसी के आधारपर हिन्दी के ऐतिहासिक नाटकों की विकासात्मक रूपरेखा निश्चित की जा सकती है।

---

१) हिन्दी नाटक का विकास - पृ. ९

आचार्य रामचन्द्र शुक्लजी " हिन्दी साहित्य का इतिहास " में नाटक का कालविभाजन तीन उत्थानों में किया है[१]-

१) प्रथम उत्थान (भारतेन्दु युग) १८६८ ई. से १८९३ ई. तक
२) द्वितीय उत्थान (द्विवेदी युग) १८९३ ई. से. १९२८ ई. तक
३) तृतीय उत्थान (प्रसाद युग) १९२८ ई. सं आजतक।

" हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास " ग्रंथ मे डॉ. दशरथ ओझाजी ने नाटक का उद्भव रासो काल से माना है। उनके मतानुसार नाटक का कालविभाजन इसप्रकार है [२]-

प्रथम उत्थान - १५४३ ई. से पूर्व
द्वितीय उत्थान - १५४३ ई. से १८४३ ई. तक,
तृतीय उत्थान १८४३ ई. से १८६३ ई. तक,
चतुर्थ उत्थान - १८६३ ई. से १९१३ ई. तक,
पंचम उत्थान - १९१३ ई. से १९४३ ई. तक,
नवीन उत्थान- १९४३ ई. से आजतक।

डॉ. सोमनाथ गुप्तजी का वर्गीकरण अपेक्षाकृत वैज्ञानिक है [३]- ?

हिन्दी नाटक साहित्य का आरंभ - १६४३ ई. से १८६६ ई. तक
हिन्दी नाटक साहित्य का विकास- १८६६ ई. से १९०४ ई. तक
सन्धिकाल - १९०४ ई. से १९१५ ई. तक
प्रसाद युग - १९१५ ई. से १९३३ ई. तक
प्रसादोत्तर युग - १९३३ ई. से १९४४ ई. तक

डॉ. श्रीपति शर्मा नाटक साहित्य का कालविभाजन इसप्रकार करते है [४]-

---

१) हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृष्ठ ८ - ९
२) हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास - पृष्ठ ५३५ - ४५
३) हिन्दी नाटक साहित्य का विकास - निर्देशिका
४) हिन्दी नाटकोंपर पाश्चात्य प्रभाव - पृष्ठ २-६

भारतेन्द्र युग ,
द्विवेदी युग ,
प्रसाद युग ,
प्रसादोत्तर युग,
आधुनिक युग।

उपर्युक्त सभी काल विभाजन को देखकर हम इस निष्कर्षपर पहुँचते है कि हिन्दी नाटक का प्रारंभ भारतेन्द्र से ही हुआ है। यद्यापि कुछ फुटकर नाटकों की रचना इससे पूर्व की गई हो जिनमें भारतेन्दु के पिता बाबू गिरिधरदास कृत " नहुष नाटक " जिसे स्वंय भारतेन्दु ने प्रथम हिन्दी नाटक स्वीकार किया है। लेकिन आज यह सिध्द हो गया है, कि उसके पहले मराठी के विष्णुदास भावे द्वारा लिखे " सीता स्वंयवर " (१९५३ ई.) तथा कई अन्य हिंदी नाटक बनारसमें खेले गये थे। अर्थात ये नाटक भारतेन्दु पूर्व लिखे गये थे। भारतेन्दु द्वारा १८६८ ई. मे. लिखे " विद्या सुन्दर " नाटक को हिन्दी नाटक का शिलान्यास माना जाता है। इस प्रकार हिन्दी नाटक का विकास सही अर्थों में भारतेन्द्र के काल से ही प्रारंभ होता है।

यहाँ हमारा आलोच्य विषय विशेषकर ऐतिहासिक नाटक से संबंधित है। अत: पूरे हिन्दी नाटय साहित्य के विकास को न देखकर केवल ऐतिहासिक नाटकों के बारेमें ही विचार करें। -

<u>हिन्दी के ऐतिहासिक नाटक</u> :

आधुनिक नाटक के विकास के बारेमे डॉ. सत्येंद्र तनेजा के विचार को देखना यहाँ आवश्यक है। आपने लिखा है, कि - " आधुनिक नाटक का प्रथम उन्मेष ऐतिहासिक भावभूमिपर हुआ। यह काल की सर्वाधिक समृध्द एवं पुष्ट धारा है।[१]"

---

१) हिन्दी नाटक पुनर्मूल्यांकन. पृष्ट १९१

आधुनिक हिन्दी नाटकों का निर्माण इतिहास की प्रेरणा से ही हो गया है। भारतेन्दु काल की राजनैतिक और सामाजिक परिस्थिती नाटककारों को प्रभावित करनेवाली थी। राष्ट्रीयता एवं स्वाधीनता के जयगान को प्रसारित करने के लिए नाटककार को इतिहास का सहारा लेना पडा। नाटककारों ने अपने नाटकों में इतिहास की नयी व्याख्या की जिससे इतिहास युगधर्म का व्याख्याना हो गया।

ऐतिहासिक नाटक : काल विभाजन :

हिन्दी के ऐतिहासिक नाटकों की विकासात्मक स्मरेखा देखते समय समग्र नाटक साहित्य का, काल के अनुरूप विभाजन करना युक्तिसंगत है। हिन्दी नाटक के प्रारंभिक कालसे लेकर आजतक पूरे नाटक साहित्य को इसप्रकार विभाजित किया जा सकता है -

अ) भारतेन्दु काल - १८६८ ई.से १९१५ ई. तक,
ब) प्रसाद काल - १९१५ ई.से १९३३ ई. तक,
क) प्रसादोत्तर काल १९३३ ई.से १९४७ ई. तक,
ड)स्वातंत्र्योत्तर काल १९४७ ई.से १९७० ई. तक,

अत: हिन्दी के ऐतिहासिक नाटकों की विकासात्मक स्मरेखा उपर्युक्त कालविभाजन के आधारपर देखेंगे।

अ) भारतेन्दु काल :-

हिन्दी नाटक का प्रारंभ भारतेन्दु के १८६८ ई.में लिखे " विद्यासुंदर " नाटक से माना जाता है, तो ऐतिहासिक नाटकों का प्रारंभ भी भारतेन्दु के ही " नीलदेवी"(१८८०) से माना जाता है। यह हिन्दी का पहला ऐतिहासिक नाटक है। " इसमें भारतीय नारी की वीरता एवं त्याग का ज्वलंत उदाहरण मिलता है।[१] "

---

१) हिन्दी के ऐतिहासिक नाटकों में इतिहास तत्व : डॉ. धनंजय पृष्ट १०८.

इसी कालमें राधाकृष्णदास ने " पद्मावती " (१८८२) में नारी के शौर्य और बलिदान का वर्णन किया है। उनका दूसरा नाटक " महाराणा प्रताप " (१८९७) राजपूत वीर का चरित्र प्रस्तुत करता है। काशीनाथ खत्री द्वारा १८८४ ई. में. सिन्धुदेश की राजकुमारियाँ ", "गुन्नौर की रानी ", तथा "लव जी का स्वप्न" ये तीन परम मनोहर ऐतिहासिक नाटक लिखे गये।

पं. राधाचरण गोस्वामी जी ने १८८९ ई. में " सती चन्द्रावली " का और १८९५ ई. मे " अमरसिंह राठौर " का सृजन किया। इसी कालमें श्रीनिवासदास का " संयोगिता स्वंयवर " (१८८५) रत्नचन्द वकील का " न्यायसभा नाटक (१८८७) बालकृष्ण भट्ट का " चन्द्रसेन " बैकुण्ठ दुग्गल जी का "श्री हर्ष" (१८८४) पं. जगतनारायण शर्मा का "अकबर गोरक्षा न्याय" (१८८९) , राम नरेश शर्मा का " सिंहल विजय " (१८९६), प्रतापनारायण मिश्र का "हठी हमीर " (१८८५) कृष्णलाल वर्मा का "दलजीतसिंह" और बलदेव प्रसाद मिश्र का " मीराबाई " (१८९७) अदि ऐतिहासिक नाटक लिखे गये। यह सारे नाटक भारत के मध्यकालीन इतिहास से संबंधित कथानकों को लेकर लिखे गये है।

इसी कालमें शालिग्राम वैश्य जी ने मध्यकालीन इतिहास की अपेक्षा प्राचीन कालीन इतिहास को लेकर " मोरध्वज " और "पुरु विक्रम" (१९०६) नाटक लिखे। गोपालराम गहमरी के " बनवीर " और " यौवन योगिनी ", गुप्तबंधु का " महाराणा प्रताप ", परमेश्वर मिश्र का " रूमती " (१९०६), शुकदेव नारायण सिंह का " वीर सरदार"(१९०९), हरिदास मार्णिक का "संयोगिता हरण " (१९१५), आनन्दप्रसाद खत्री का " गौतम बुध्द " रामप्रसाद मिश्र का " महाराणा राजसिंह " भँवर लाल सोना का " वीर कुमार छत्रसाल " हरिचरण श्रीवास्तव का "पृथ्वीराज"अदि ऐतिहासिक नाटक लिखे गये।

उपर्युक्त सभी नाटकों का मूलस्रोत बंगाली नाटक साहित्य था। बंगाली नाटककार द्विजेंद्रलाल राय के नाटकों का हिन्दी मे केवल अनुवाद हो रहा था।

इसी अनुवाद परम्परामें और भी कई ऐतिहासिक नाटक लिखे गये। जिनमे प्रमुख है - शिवप्रसाद चारण - आपने " पन्ना धाय " , " महाराणा प्रतापसिंह ", "शशांक नरेंद्रगुप्त", "सिन्धु विध्वंस", "गोरा बादल", महाराणा संग्रामसिंह", "हिरोल", "वीर हमीर", "बुन्देला", "हेमू विक्रमादित्य", "जूझारसिंह", " छत्रसाल " और "सदाशिवराव भैाऊ " अदि अनेक नाटको का निर्माण किया। इसी कालमें पं. जिनेश्वर दयाल मायल जी ने " सम्राट चन्द्रगुप्त" नाटक द्विजेंद्रलाल राय के नाटक का भावानुवाद के रूपमें लिखा।

भारतेन्दु कालीन समग्र ऐतिहासिक नाटक का अध्ययन करनेपर यह स्पष्ट हो जाता है कि, इस काल के अधिकतर ऐतिहासिक नाटक बंगाली नाटकों के अनुवाद याँ उनसे प्रेरणा लेकर लिखे गये है। अत: स्पष्ट है, कि भारतेन्दु युगीन ऐतिहासिक नाटक मौलिक न होकर अनूदित है। फिर भी विषयवस्तु की दृष्टि से यह नाटक समाज को प्रेरणादायक हुये है। " भारतीय गौरव के माध्यम से देश:हित की भावना को प्रसारित करने एवं समसामयिक समस्याओं के समाधान के लिए इतिहास का आधार सफल ठहरा है। [१]" इतिहास प्रसिध्द पुरूष तथा नारी का चरित्र इनमें व्यक्त हुआ है। " नाटय कला की दृष्टि से बहुत उच्च कोटी की रचना इस समय में नही की जा सकीं। ------ ऐतिहासिक नाटय रचना में जिस तरह की प्रामाणिकता, कल्पनात्मक निर्माण और वस्तुयोजना की आवश्यकता होती है, उसका प्राय: इन नाटक कारों में अभाव है। [२]" इसी के आधारपर हिन्दी नाटक का विकास हुआ है। ऐतिहासिक नाटकों का विकसित रूप हमें जयशंकर प्रसाद के नाटयक्षेत्र में प्रवेश करनेपर दिखाई देता है।

ब) <u>प्रसाद काल</u> :

जयशंकर प्रसाद के नाटक क्षेत्रमें प्रवेश करने से हिन्दी ऐतिहासिक नाटक को विकास की दिशा मिल गयी। फिर भी प्रसादपर द्विजेंद्रलाल राय का ही प्रभाव था। इसके बारे श्री शिलीमुख लिखते है -

---

१) हिन्दी के ऐतिहासिक नाटकों में इतिहास तत्व - पृष्ट ११२

२) वही, पृष्ट ११४ - ११५

" द्विजेंद्रलाल राय का प्रभाव, इतना गहरा हो चुका था, कि नाटक के संबंधमें वर्षों तक उनके ग्रंथ और सिध्दांतों के अतिरिक्त और किसी प्रकार के आदर्श की चर्चा ही नहीं थी।[१] " प्रसाद इसी आदर्श को सामने रखकर नाटक का निर्माण करने लगे। प्रसादजी ने अपने नाटकों के कथानक के लिए जो इतिहास चुना है, वह भारत का स्वर्णयुग था।

इसके बारे में स्वंय प्रसादजी लिखते है - " मेरी इच्छा भारतीय इतिहास के अप्रकाशित अंशों मे से उन प्रकाण्ड घटनाओं का दिग्दर्शन कराने की है, कि जिन्होंने हमारी वर्तमान स्थिति को बनाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया है " [२] अपनी इस इच्छा के अनुरूप प्रसादजी ने " राज्यश्री " (१९१५) "स्कंदगुप्त " (१९२२) , "अजातशत्रु " (१९२२), " चन्द्रगुप्त " (१९३१) "विशाख", "कामना" और " ध्रुवस्वामिनी " (१९३३) आदि ऐतिहासिक नाटक लिखे। केवल " जनमेयजय का नागयज्ञ "प्रसादजी का एकमात्र पौराणिक नाटक है। प्रसादजी के बाकी सारे नाटक ऐतिहासिक है, इसी लिए ऐसा लगता है, कि प्रसाद वर्तमान जीवन की ऐतिहासिक व्याख्या करना चाहते है।

उद्देश्य के रूप में इतिहास को स्वीकार करते हुये भी प्रसाद की प्रतिभा का परिचय स्वतंत्र एवं गत्यात्मक पात्रों के निर्माण में मिला है। प्रसाद के नायक महान एवं गौरवनिष्ठ है, जो लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एकांत भाव से जुडे रहते हैं। वे कर्मठ शक्तिशाली तथा त्यागी है, जो मातृभूमि की रक्षा एवं सम्मान के लिए सर्वस्व लुटानेमें अपना गौरव समझते है।

प्रसादजी ने नाटकों के विषय रूपमें इतिहास में से उस युग का चुनाव किया जो आर्य संस्कृति का स्वर्णकाल - गुप्तकाल था और उसकी आभा सारे जगत् में फैल रही थी। आपके नाटकों का मूल स्वर हिन्दु सभ्यता और संस्कृति का चित्रण करना है। ध्रुवस्वामिनी नाटक में ऐतिहासिक तथ्यों के साथ उस समय की ज्वलंत समस्या विवाह विच्छेद को सफलता के साथ चित्रित किया है।

---

१) प्रसाद की नाटय कला - पृ. ४२
२) " विशाख " नाटक की भूमिका.

प्रसादजी ने अपने नाटकों में नारी को विशेष आदर एवं सम्मान का स्थान दिया है। प्रसाद के सारे नाटकों के नारी पात्र दो प्रकार के नजर आते है -

१) भावप्रवण उदार, स्नेहसिक्त ममता एवं त्याग की मूर्ति।

२) पुरुष के समान राजनीति में भाग लेनवाली चतुर चंचल एवं प्रपंचकारी।

इनमें भी प्रथम प्रकार के नारियों का रूप विशेष निखर उठा है प्रसाद के ऐसे नारी पात्र हृदय के संगीत में खोये हुए है, जैसे "राज्यश्री" की सुरमा, "अजात शत्रु" की मल्लिका और पद्मावती , "स्कंदगुप्त" की देवसेना, और जयमाला, "चन्द्रगुप्त" की मालविका, सुवासिनी तथा कार्नेलिया, "ध्रुवस्वामिनी " कि कोमा।

प्रसादयुगीन अन्य सभी नाटककारों में भी यही प्रवृत्ति मिलती है। इस कालमें लोकनाथ सिलंकारी का १९२५ में प्रकाशित " वीर ज्योति " दु:खांत नाटक है। चन्द्रराज भंडारी के " महात्मा बुध्द " (१९२२) और " सम्राट अशोक " (१९२३) दोनों ऐतिहासिक नाटक है। दोनों में इतिहास का जीवंत चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। जगन्नाथप्रसाद " मिलिंद " का " प्रताप-प्रतिज्ञा " (१९२८-२९) ऐक्य भावना को व्यक्त करनेवाला ऐतिहासिक नाटक है। दुर्गादास गुप्त ने " भक्त तुलसीदास " (१९२२) " महामाया " (१९२४) और " देशोध्दार" नाटक लिखे।

प्रसाद युग में ही डॉ. सुवर्णसिंह वर्मा"आनंद " के "छत्रपती शिवाजी " और " नजामे अकबर " दो ऐतिहासिक नाटक मिलते है। इसके साथ विश्वंभर सहाय का " राजकुमार भोज " यह शिक्षाप्रद ऐतिहासिक नाटक , व्यथित हृदय के "पुष्पफल" और " स्नेह बंधन " परिपूर्णानन्द वर्मा के " नाना फडणीस ", " अवध राज्य का पतन ", " सत्तावन की क्रान्ति ", नबाब वाजिद आली शाह ", जमुनादास मेहरा का " पंजाब केसरी ", " रूपनारायण पाण्डेय का " मारवाड ", मिश्रबंधुओं का "ईशान वर्मन" और " शिवाजी"(१९३८), पाण्डेय बेचेन शर्मा " उग्र " जी का

" महात्मा ईसा " (१९२२) तथा गोविंद वल्लभ पंत जी का " राजमुकुट " (१९२९) आदि अनेक ऐतिहासिक नाटक प्रसाद युगमें ही लिखे गये।

समग्र प्रसाद युगीन ऐतिहासिक नाटकों का अध्ययन करेने पर यह स्पष्ट होता है, कि इस काल के नाटककारों ने इतिहास की घटनाओं का प्रदर्शन करके वर्तमान के प्रति देखने का नया दृष्ठिकोण समाज के सामने रखा है। इतिहासपर ही वर्तमान और भविष्य आधारित होता है। इतिहास प्रेरणा दायक होता है। प्रसाद युगीन नाटककारों ने अपने ऐतिहासिक नाटकों द्वारा प्रेरणा देने का कार्य किया है। प्रसाद का काल स्वाधीनता संग्राम का काल था। म. गांधी के नेतृत्वमें स्वाधीनता आंदोलन चल रहा था। ऐसे समय समाज को प्रेरणा देनेवाले साहित्य की आवश्यकता थी। प्रसादयुगीन नाटकों ने इस काल की मांग को पूरा करने का कार्य किया है।

प्रसाद युगीन ऐतिहासिक नाटकों में निम्न विचार दिखाई देते है -

१) <u>स्वाधीनता प्रेम की भावना</u> :

जयशंकर प्रसाद के " स्कंदगुप्त " और " चन्द्रगुप्त " जगन्नाथप्रसाद " मिलिंद " के " प्रताप प्रतिज्ञा " चतुरसेन शास्त्री के " राजसिंह " पाण्डेय बेचन शर्मा " उग्र " के " महात्मा ईसा " और मिश्रबंधुओं के " इशानवर्मन आदि नाटको में स्वाधीनता की भावना व्यक्त किया है। प्रसाद के "चन्द्रगुप्त नाटक का " हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुध्द शुध्द भारती " गीत तो स्वाधीनता की भावना से भरा हुआ (प्रमाण गीत) नजर आता है।

२) <u>एकता की भावना</u> :

स्वाधीनता आंदोलन के साथ हिंदु - मुस्लिम एकता निर्माण करना काल की मांग थी। प्रसाद के " कामना " और " चन्द्रगुप्त" जगन्नाथप्रसाद " मिलिंद" का प्रताप प्रतिज्ञा" चतुरसेन शास्त्री का "राजसिंह" आदि में यह भावना व्यक्त हो गयी है।

३) शोषण :

समाज में प्रचलित शोषण वृत्ति का चित्रण इस काल के ऐतिहासिक् नाटकों में मिलता है। मिश्र बंधुओं का " ईशान वर्मन् " इसी प्रवृत्ति का चित्रण करता है।

४) रिश्वत की समस्या :

शोषण के साथ साथ समाजमें रिश्वतखोरी भी बढ रही थी। प्रसादयुगीन ऐतिहासिक नाटकों में इसका चित्रण मिलता है। प्रसाद जी के " अजातशत्रु " में इसका चित्रण मिलता है।

५) राजनीति में नारी का पदार्पण :

प्रसादयुगीन ऐतिहासिक नाटकों में केवल नायक ही राजनीति में रुचि रखनेवाला नजर नहीं आता, तो नायिका तथा अन्य नारी पात्र भी राजनीति में रूची रखते नजर आते हैं। प्रसाद के " राजश्री ", " चन्द्रगुप्त ", और "ध्रुवस्वामिनी" नाटक के नारी पात्र राजनीति में सहयोग देनेवाले है, क्योंकि स्वाधीनता आंदोलन में कुछ नारियाँ भी सहयोग दे रही थी। उसका चित्रण इन नाटकों में मिलता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ठ होता है, कि प्रसाद युगीन ऐतिहासिक नाटक अत्यंत विकसित और काल के अनुरूप समाज का चित्रण करके, समाज को नयी दिशा देने में समर्थ ऐसे थे। इसीलिए प्रसाद युग के बाद प्रसादोत्तर युग में लिखे ऐतिहासिक नाटक अत्यंत सरस और नाटय शिल्प की दृष्टि से भी संपन्न ऐसे नजर आते है।

क) प्रसादोत्तर काल :

प्रसादोत्तर युगमें ऐतिहासिक नाटक के सृजन में गति आ गयी। अनेक नाटककारों ने इस युगमें ऐतिहासिक नाटक लिखे। जिनमें प्रमुख है – हरिकृष्ण प्रेमी,

सेठ गोविंददास, लक्ष्मीनारायण मिश्र। प्रेमी जी ने अनेक ऐतिहासिक नाटक लिखे है। उनमे से इस काल में - " रक्षाबन्धन " (१९३४), " प्रतिशोध ", शिवा साधना (१९३७) , " आहुति " (१९४०), " स्वप्नभंग " (१९४०), "मित्र " (१९४१) " शीशदान " , "विषपान " (१९४५) आदि ऐतिहासिक नाटक, तो स्वातंत्र्योत्तर कालमें " शपथ " , उद्धार ", कीर्तिस्तंभ" , " शाहजहाँ " " शतरंज के खिलाडी " और " विदा " आदि ऐतिहासिक नाटक लिखे। आधुनिक हिन्दी नाटक साहित्य के विकास में प्रसादजी के बाद हरिकृष्ण प्रेमी जी को गौरवपूर्ण स्थान दिया जाता है। जगदीशचंद्र माथुर जी ने ठीक ही कहा है - " मध्ययुगीन इतिहास के द्वारा अपने आदर्शों को संजोने का प्रयास प्रेमीजी ने किया है। " ऐतिहासिक नाटक लिखने की प्रेरणा कैसे मिली, इस विचार में आपने लिखा है -

" पंजाब में ज्ञान बाँसुरी और कर्म का शंख फुंकनेवाली बहन कुमारी लज्जावती ने एक बार मुझसे कहा था, कि हमारे भारतीय साहित्य में हिन्दुओं और मुसलमानो को एक दूसरें से दूर करनेवाली पुस्तकें तो बहुत बढ रही है। उन्हें मिलाने का प्रयत्न बहुत थोडे साहित्यकार कर रहे है। तुम्हें इस दिशा में प्रयत्न करना चाहिए। इसी लक्ष्य को सामने रखकर उन्होने मुझे ऐतिहासिक नाटक लिखने का आदेश दिया। [१] "

इस आदेश के अनुरूप प्रेमीजी ने ऐतिहासिक नाटकों का सृजन किया। आपका " विदा " नाटक इस विशाल देशेमें राष्ट्रीय एकता स्थापित करने की दृष्ठि से लिखा गया है। इसके बारे में आप लिखते है - " मैने अपने नाटकों द्वारा राष्ट्रीय एकता के भाव पैदा करने का प्रयत्न किया है। [२]"

---

१) " शिवा साधना " नाटक की भूमिका
२) " स्वप्नभंग " नाटक की भूमिका

प्रसादोत्तर ऐतिहासिक नाटक के क्षेत्रमें दूसरे महत्त्वपूर्ण नाटककार है सेठ गोविंददास। आप एक कुशल एकांकीकार भी हैं। इस कालमें आपने " हर्ष " (१९३५) " कुलीनता " (१९४०) " शशिगुप्त " (१९४२), " शेरशाह " (१९४५) आदि ऐतिहासिक नाटक लिखे। सेठ गोविंददास ने " कुलीनता " में ऐतिहासिक आख्यान के आधारपर कर्म , पौरुष और त्याग का महत्व , शेरशाह में हिन्दु मुस्लिम एकता और " शशिगुप्त " में प्राचीन प्रजातांत्रिक गणराज्य की स्थापना को व्यक्त किया है। हिन्दी समस्या नाटक के जनक लक्ष्मी नारायण मिश्र ऐतिहासिक नाटक " के क्षेत्रमें भी महत्त्वपूर्ण है। प्रसाद के कालमें आपने " अशोक " तो इस कालमें " गरुडध्वज " (१९४५) और " "नारद की वीणा"(१९४६) ये दो ऐतिहासिक नाटक लिखे। आप प्रसाद की प्रतिक्रिया में नाटक लिखते ऐसा कहा जाता है। लेकिन सच तो यह है, कि प्रसाद की ऐतिहासिक सांस्कृतिक नाट्य परम्परा मिश्रजी के नाटकों में नए रूपमें जीवंत हो उठी है।

प्रसादोत्तर कालमें लिखे अन्य ऐतिहासिक नाटक इस प्रकार है - उदयशंकर भट्ट कृत " दाहर" या " सिंधपतन (१९३४) द्वारकाप्रसाद मौर्य का " हैदरअली " (१९३४) जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी का " तुलसीदास " (१९३४), सीता-राम चतुर्वेदी के " अनारकली " (१९३४) और " सेनापती पुष्पमित्र " (१९४५) , भगवतीप्रसाद पाथरी का"कालपी " (१९३४), धनीराम प्रेम का " विरांगना पन्ना " (१९३४), दशरथ ओझा का " चितौड की देवी " (१९३४) , कुमार हृदय का " भग्नावशेष " (१९३५), यमुनाप्रसाद त्रिपाठी का"आजादी " या"मौत" (१९३६), कैलाशनाथ भटनागर का " कुणाल " (१९३६), गोपालचन्द्र देव का"सरजा शिवाजी " (१९३७), उपेन्द्रनाथ अश्क का " जय पराजय " (१९३७) गौरी शंकर सत्येंद्र का " मुक्तियज्ञ " (१९३७) चन्द्रगुप्त विद्यालंकार के " अशोक " (१९३७) " रेवा " (१९३८) चन्द्रशेखर पाण्डेय के"रजपूत रमणी " (१९३७)," मेवाड उध्दार"(१९३९) मिश्रबंधुका

"शिवाजी " (१९३८), परिपूर्णानन्द का " रानी भवानी " (१९३८) संत गोकुलचन्द का " मीरा " (१९३९), बलदेव प्रसाद मिश्र का " क्रांति " (१९३९), गोविंदवल्लभ पंत का " अंत:पुर का छिद्र " (१९३९), शंभुदयाल सकसेना का " साधना पथ " (१९४०) हरिश्चंद्र सेठ का पुरु और अलकजेंडर" (१९४०), बैकुण्ठनाथ दुग्गल का " श्री हर्ष " (१९४१) कुँवर वीरेंद्र सिंह का " मर्यादा का मूल्य " (१९४२) स्व. नारायण पाण्डेय के " पद्मिनी और " मारवाड गौरव " (१९४२) भानुप्रताप सिंह का " राज्यश्री " (१९४३), उदयशंकर भट्ट का " मुक्तिपथ " (१९४४), न्यादरसिंह बैचैन का " अमरसिंह राठौर " (१९४७), सुदर्शन का " सिकंदर " (१९४७) विराज का " सम्राट विक्रमादित्य " (१९४७) आदि ऐतिहासिक नाटक इस कालमें लिख गये।

प्रसादोत्तर युगीन ऐतिहासिक नाटकों में निम्न विचार दिखाई देते है -

१) <u>स्वाधीनता के प्रयत्न</u> :

प्रसादोत्तर ऐतिहासिक नाटक का काल भारतीय स्वाधीनता संघर्ष का अंतिम काल था। काल के अनुरूप ही प्रसादोत्तर ऐतिहासिक नाटकों में स्वाधीनता की भावना व्यक्त हो गयी है।"शशिगुप्त " , " कुलीनता ", "प्रतिशोध ", " आहुति ", शिवासाधना", " जय पराजय ", " शिवाजी " आदि नाटकों में स्वाधीनता के लिए प्रयत्न करने वाले चरित्र और विचार मिलते है।

२) <u>ऐक्य भावना</u> :

स्वाधीनता के साथ हिन्दु मुस्लिम एकता की समस्या भी इस कालमें बढ रही थी। इस काल के"अशोक ", " प्रतिशोध ", " स्वप्नभंग ", "शीशदान" "शशिगुप्त " आदि नाटकों में एकता निर्माण करने का प्रयत्न किया है। " रक्षा बन्धन " हिन्दु मुस्लिम एकता का आदर्श उदाहरण है।

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

३) पुलिस अत्याचार:

पुलिस के अत्याचारो का वर्णन उपेन्द्रनाथ अश्क जी के " जय पराजय" नाटक में मिलता है।

४) स्वार्थी प्रवृत्ति :

अपने स्वार्थ के लिए देश तथा धर्म के विरोधी कार्य करनेवाले स्वार्थी लोगों का चित्रण "रेवा" तथा "अशोक" नाटक में मिलता है।

प्रसादोत्तर युगीन समग्र ऐतिहासिक नाटक भारतीय समाज को प्राचीन इतिहास की याद दिलाकर आदर्श की ओर ले जानेवाले है। वे अत्यंत सरस और प्रेरणाप्रद ऐसे है। स्वातंत्र्योत्तर युगीन ऐतिहासिक नाटकों में भी यही प्रवृत्ति विकसित हुई।

ड) स्वातंत्र्योत्तर काल:

भारतीय स्वाधीनता प्राप्ति का वर्ष (१९४७) हिन्दी नाट्य साहित्य के इतिहासमें अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। सही अर्थों मे आधुनिक नाटक का विस्तार यही से हुआ। इस काल के नाटककार का ध्यान रंगमंच की ओर गया और नाटक मे अभिनव प्रयोगों का प्रारंभ हुआ।

प्रसादोत्तर काल के ही कई नाटककार इस युगमें ऐतिहासिक नाटक लिखे, जिनमें प्रमुख है - लक्ष्मीनारायण मिश्र। समस्या नाटक की ओर झुके हुये मिश्रनी ने इस कालमें फिरसे ऐतिहासिक नाटकों का सृजन किया। इस कालमें मिश्र जी ने "वत्सराज" (१९४९), "दशाश्वमेध" (१९५०), "चक्रव्यूह" (१९५३), "वितस्ता की लहरें" (१९५२), "वैशाली में वसंत" (१९५५), "जगदगुरू" (१९६१), "अपराजित" (१९६१), "चित्रकुट" (१९६१), "धरती का हृदय" (१९६२), "वीरशंख" (१९६७) आदि ऐतिहासिक नाटक लिखे। मिश्रजी के ऐतिहासिक नाटको के बारे मे डॉ. शत्रुघ्न प्रसाद अपने शोध प्रबंध मे लीखते है -

" मिश्रजीने भारतीय इतिहास का गहन अध्ययन कर इसके अंधकारपूर्ण अध्यायो पर प्रकाश डाला है। ऐतिहासिक नाटककार को अतीत का अनुशीलन करना पडता है, जो प्रसाद ने किया था। मिश्रजी ने भी इतिहास का मंथन कर अनेक नये नये रत्न दिखाये है।[१]"

अगर मिश्रजी के ऐतिहासिक नाटकों की तुलना प्रसाद के नाटको के साथ करें तो यह स्पष्ठ होता है, कि प्रसाद ने अपने ऐतिहासिक चरित्रों द्वारा राष्ट्रीयता की उदात्त भावना को संचारित करने का प्रयत्न किया है। उन्होंने भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता को दिखाकर आत्मगौरव को जगाया, तो मिश्र जी ने भी प्राचीन संस्कृति की श्रेष्ठता तथा अतीत की उज्जवलता को प्रदर्शित करके देश की संस्कृतिनिष्ठा और राष्ट्रीय भावना को जगाने का प्रयत्न किया है। इसीलिए दोनों ने भी भारतीय इतिहास के गौरवपूर्ण अंशों को अपने नाटको का कथानक बनाया है।

प्रसादोत्तर काल के प्रमुख ऐतिहासिक नाटककार हरिकृष्ण प्रेमी ने स्वातंत्र्योत्तर कालमें कई ऐतिहासिक नाटक लिखे है। आपके " उद्धार " (१९४९) " शपथ " (१९५१), " प्रथम जौहर ", " कीर्तिस्तंभ" (१९५४), "शतरंज के खिलाडी " (१९५५), " आन का मान ", " सांपो की दृष्ठि " (१९५८) " विदा " (१९५८), " शाहजहाँ", " रक्तदान", " विषपान "आदि ऐतिहासिक नाटक है।

स्वातंत्र्योत्तर काल के ऐतिहासिक उपन्यासकार डॉ. वृन्दावनलाल वर्मा जी ने " फुलो की बोली " (१९४७), पूर्व की ओर " (१९४९), " झांसी की रानी लक्ष्मीबाई " (१९४८), "हंस मयूर " (१९४८), "बीरबल " (१९४९) और ललित विक्रम (१९५८) ये ऐतिहासिक नाटक भी लिखे है। रामकुमार वर्मा जी को

---

१) लक्ष्मी नारायण.मिश्र के ऐतिहासिक नाटक, पृष्ठ २७

ऐतिहासिक एकांकीकार माना जाता है। आपके ऐतिहासिक एकांकियों के उद्देश्य के बारे में आप लिखते है - "एक तो राष्ट्र की संस्कृति मे मेरा विश्वास है, जितका विकास करने मे हमारे ऐतिहासिक महापुरुषो का विशेष हाथ है। ऐतिहासिक जीवन के निरूपण से हमारे वर्तमान जीवन को एक नैतिक धरातल प्राप्त होता है। आपके "औरंगजेब", "शिवाजी", "चारुमित्रा", " कौमुदी महोत्सव" और "नाना फडणीस" प्रसिध्द ऐतिहासिक नाटक है।

स्वातंत्र्योत्तर काल के अन्य ऐतिहासिक नाटक इस प्रकार है - डॉ. देवीलाल पामर का "राजस्थान का भाष्म" (१९४७), रामवृक्ष बेंनीपुरी के "अम्बपाली" (१९४७) तथा "तथागत" (१९४८), चतुरसेन शास्त्री के "अजितसिंह" (१९४९)ण "राजसिंह" (१९४९), "अमरसिंह" और "छत्रसाल" (१९५९), "उदयशंकर भट्ट का "शक विजय" (१९४९), बैकुण्ठनाथ दुग्गल का "समुद्रगुप्त" (१९४९), मोहनलाल महतो का "अफजल वध" (१९५०), ब्रजकिशोर नारायण का "वर्धमान महावीर" (१९५०), रामदत्त भारद्वाज का "सोरों का संत" (१९५०), उदयशंकर भटनागर का "हमीर हठ" (१९५०), जगदीशचंद्र माथूर के "कोणार्क" (१९५१) और "शारदीया" (१९५८), जनार्दनराय नागर का "आचार्य चाणक्य"(१९५१) दशरथ ओझा के "सम्राट समुद्रगुप्त" (१९५२), "स्वतंत्र भारत और "प्रियदर्शी सम्राट अशोक", देवराज दिनेश का "मानव प्रताप" (१९५२) डॉ. रागेय राघव के "रामानुज" (१९५२) और "विरुढक" (१९५५) विष्णु प्रभाकर का "समाधि (१९५४) ओंकारनाथ दिनकर के "मंजुदेव" अथवा "वागीश्वर" (१९५४) विग्रहराज विशालदेव "(१९५७), "अंतिम सम्राट"(१९५८), "धारेश्वर भोज" (१९५८), "भगवान बुध्ददेव"(१९६६), "मृत्युंजय" और "मुक्तियज्ञ" (१९६७), बनारसीदास करुणाकर का "सिध्दार्थ बुध्द (१९५५) , सेठ गोविंददास के "कवि भारतेन्दु" (१९५५), और "रहीम" (१९५५) चतुर्भुज का "कलिंग विजय" (१९५६), भगवतीप्रसाद बाजपेयी का "राय पिथौरा" (१९५८), शम्भुदयाल सक्सेना का "बापू ने कहा था" (१९५८), पाण्डेय बेचेन शर्मा "उग्र" जी का"अन्नदाता माधव

महाराज महान " डॉ. रामगोपाल शर्मा "दिनेश" जी के "सोमनाथ" (१९५५) और "पृथ्वीराज" (१९६३), मोहन राकेश के"आषाढ का एक दिन" (१९५८) और " लहरों के राजहंस " , शारदा मिश्र का "आमेर की सरस्वती " (१९६५), अकिंचन शर्मा का "गुरुदेव चाणक्य" (१९७०), विमल वात्सायन के "उत्सर्ग " (१९६८) और " लहर लहर मधुपर्क (१९७०), भगवानदास गोस्वामी का "राव जैतसीं " (१९६६), तथा सत्येन्द्र पारीक का " प्यासी दरिया" (१९७१) आदि अनेक ऐतिहासिक नाटक इस काल में लिख गये है।

स्वातंत्र्योत्तर ऐतिहासिक नाटक प्रसादोत्तर नाटकों से भिन्न उद्देश्य को लेकर लिखे थे। स्वतंत्रता के पहले ऐतिहासिक नाटकों का उद्देश्य "स्वाधीनता की प्रेरणा दिलाना था , परन्तु " स्वातंत्र्योतर नाटकों का प्रधान उद्देश्य जनता मे. स्वराष्ट्र रक्षा की भावना भरना तथा देश को पतन के गर्त में ढकेलने वाले उपकरणों के प्रति हमें सचेत करना [१] रहा।

स्वातंत्र्योत्तर काल के ऐतिहासिक नाटक मे निम्न विचार दिखाई देते हैं। -

१) राष्ट्रीयता :

स्वाधीनता मिलनेपर राष्ट्रीयता का स्वर मंद हो गया इसीलिए नाटककारों को आदर्श ऐतिहासिक चरित्रोंद्वारा फिरसे राष्ट्रीयता की भावना को जगाने का कार्य करना पडा। " शपथ," " अशोक ", " स्वंतत्र भारत ", " बापू ने कहा था " तथा " पृथ्वीराज" आदि नाटक में इसका संकेत मिलता है।

२) जन संगठन की चेतना :

स्वातंत्र्योतर काल के ऐतिहासिक नाटकों मे जन संगठन को महत्व दिया गया। राजतंत्र के टूट जानेपर देश का भविष्य जनता की एकतापर निर्भर रहता है।

---

१) हिन्दी नाटक : डॉ. बच्चनसिंह, पृष्ठ, ११७.

इसी लिए जनतंत्र मे जनता का जागरूक होना आवश्यक है। इस कालके ऐतिहासिक नाटको ने यही कार्य किया है। "शपथ" "समाधि", "उध्दार", कीर्तिस्तंभ, "पृथ्वीराज" आदि नाटक इसी प्रकार के है।

३) समानता:

प्राचीन परम्परागत धार्मिक विश्वास, नियम हिन्दु मुस्लिम संघर्ष यह सब मानव मानवमे विषमता को बढ़ानेवाले विचार इन नाटको मे कम होकर समानता लाने का नया सिध्दांत मिलता है। "उध्दार" नाटक मे दुर्गा का चरित्र इसी प्रकार का है।

४) आदर्श कल्पना:

स्वाधीनता के बाद देशमे नये नये परिवर्तन होने लगे। इस कालके नाटककारो ने अपने नाटकों के द्वारा कुछ आदर्श कल्पनाओ को व्यक्त किया। जैसे "पृथ्वीराज" नाटकमे महाराणा रायमल के रूपमे एक आदर्श राजा की कल्पना की है।

स्वातंत्र्यो-तर काल के ऐतिहासिक नाटको के बारे मे डॉ. दशरथ ओझा लिखते है - " इस काल के ऐतिहासिक नाटको मे जनता को सदाचारी, कर्मठ, देश के गौरव के अनुरूप बनाने का प्रयास पाया जाता है। नाटयकारो का ध्यान देश को विश्व में गौरवशाली बनाने की ओर अधिक रहा है।[१]"

उपर्युक्त विचार स्वातंत्र्येा-तर काल के ऐतिहासिक नाटको के उद्देश्य को स्पष्ठ करते है। अत: यह स्पष्ठ है, कि स्वातंत्र्योतर काल के ऐतिहासिक नाटकों का उद्देश्य अत्यंत महत्वपूर्ण ऐसा होते हुए समसामयिक युग के लिए प्रेरणा प्रद ठहरता है। इसी लिए इस काल के ऐतिहासिक नाटक कथानक और चरित्र चित्रण की अपेक्षा उद्देश्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

---

१) हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास, पृष्ठ ४३९

निष्कर्ष:

समग्र हिन्दी के ऐतिहासिक नाटको में इतिहास के चरित्रों तथा घटनाओं को लेकर वर्तमान जीवन को दिशा देने का कार्य नाटककारों ने किया है। ऐतिहासिक नाटक की कथावस्तु भले ही इतिहास से संबंधित हो उसमें शाश्वत सत्य रहता है, जिसका संबंध वर्तमान कालीन एवं भविष्यकालीन मानवजीवन से बराबर बना रहता है।

ऐतिहासिक नाटककार इतिहास के माध्यम से वर्तमान पर प्रकाश डालने का कार्य करते है। हिन्दी के ऐतिहासिक नाटको मे इतिहास को ऐतिहासिक सीमाओं से स्वतंत्र एवं स्वच्छन्द रूपमें स्वीकार करने का एक लाभ यह हुआ, कि कुछ नाटककारो ने अपने पात्रों को सहज मानवीय धरातल पर चित्रित किया, जो ऐतिहासिक स्वरूप के होते हुए भी अनैतिहासिक एवं मानवीय हैं।

0 0 0